[2013] 9 एस. सी. आर. 410

स्टैंडर्ड चार्टर बैंक

बनाम

धरमिंदर भोही और अन्य

(सिविल अपील संख्या 8486/2013)

13 सितंबर, 2013

[अनिल आर. दवे और दीपक मिश्रा, जेजे.]

वित्तीय संपत्तियां का प्रतिभूतिकरण और पुनर्निर्माण और सुरक्षा हित प्रवर्तन अधिनियम 2002 डीआरटी और डीआरएटी द्वारा मामलों के निपटान और स्थगन देने में देरी - अधिनियम का उद्येश्य-समझाया गया - माना गया, डीआरटी द्वारा आवेदन के निपटान और डीआरएटी द्वारा अपील में देरी से देश की आर्थिक रीढ में क्षरण पैदा होने की संभावना है - स्थगन देना एक अपवाद होना चाहिए न कि कोई नियमित और यांत्रिक रूप से दिया जाना चाहिये - न्यायाधिकरणों से तत्परता से कार्य करने की अपेक्षा की जाती है, ताकि संजीदा वादी विलंबकारी युक्तियों का सहारा न ले। मौजूदा मामले में, डीआरएटी के पास मामले को स्थगित करने और अंत में एक अत्यंत संक्षिप्त आदेश पारित करके इसे निपटाने का कोई कारण नहीं था - एक उपचारात्मक कदम की आवश्यकता है और डीआरएटी के अध्यक्ष और

सदस्य ऐसे विशेष कानूनों, अर्थात् सरफेसी अधिनियम और आरडीबी अधिनियम द्वारा अपेक्षित दायित्वों के प्रति सजग रहने का प्रयास करेंगे।

बैंकों और वित्तीय संस्थानों को शोध्य ऋण की वसूली अधिनियम, 1993 धारा 19 और 22 - अधिनियम का उद्देश्य और न्यायाधिकरण के समक्ष प्रक्रिया - माना गया, डीआरटी और डीआरएटी सिविल प्रक्रिया संहिता द्वारा निर्धारित प्रक्रिया से बंधे नहीं होंगे, बल्कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों और बनाये गये नियमों के द्वारा निर्देशित होंगे। उन्हें अपनी प्रक्रिया को विनियमित करने की शक्तियां प्रदान की गई हैं जैसी कि उन्हें दी गयी है, क्योंकि उनकी स्थापना का उद्देश्य उनके समक्ष प्रस्तुत आवेदनों और अपीलों का शीघ्र निस्तारण करना है - उनके पास विशेषज्ञता के साथ विशिष्ट संस्थानों का चरित्र है और उन्हें त्वरित तरीके से वाद पर निर्णय लेने का अधिकार क्षेत्र प्रदान किया गया है ताकि व्यापक सार्वजनिक हित, यानी देश की अर्थव्यवस्था को नुकसान न हो।

धारा 19(25)- न्यायाधिकरण की शक्तियां- माना गयाः धारा 19(25) सीमित शक्तियाँ प्रदान करती है-न्यायाधिकरण को अधिनियम के तहत ऐसी शक्ति दी गई है कि ट्रिब्यूनल ऐसे आदेश दे सकता है और ऐसे निर्देश दे सकता है जो उसके आदेशों को प्रभावी बनाने या उसकी प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने या न्याय के उद्देश्य को सुरक्षित करने के लिए आवश्यक या समीचीन हो- न्यायाधिकरण को वैधानिक मापदंडों के भीतर

कार्य करना आवश्यक है- ट्रिब्यूनल के पास कोई अंतर्निहित शक्तियाँ नहीं हैं- और यह स्पष्ट है कि धारा 19(25) सीमित शक्तियाँ प्रदान करती है- यह एक अदालत की अलग प्रकृति की भूमिका नहीं निभा सकता जो वास्तव में बैंक के खिलाफ कोई भी कार्रवाई शुरू करने की स्वतंत्रता दे सकती है- नीलामी क्रेता के तरफ से की गई प्रस्तुति को ध्यान में रखते हुए और फिर यह कहने के लिए आगे बढना कि वह बैंक द्वारा की गई किसी भी चूक के लिए उसके खिलाफ कोई भी कार्यवाही करने के लिए स्वतंत्र है, जिसे कानून की कोई मंजूरी नहीं हैं- इसलिए, टिप्पणी अर्थात, ''नीलामी खरीदार को बैंक द्वारा की गई किसी भी चूक के लिए उसके खिलाफ कार्यवाही दर्ज करने की स्वतंत्रता भी दी जाती है।'', को हटाया जाता है- उच्च न्यायालय के फैसले को भी रद्द कर दिया जाता है जिसके तहत उसने डीआरएटी द्वारा स्वत्रंता प्रदान करने में हस्तक्षेप करने से इंकार कर दिया है।

प्रतिवादी नं. 1 ने 17.5.1999 को अपीलकर्ता- बैंक से गृह ऋण प्राप्त किया, और उसे चुकाने में विफल रहने पर, बैंक ने गिरवी रखी संपत्ति को बेचने की कार्रवाई की, जिसे उसने प्रतिवादी संख्या 2 डेवलपर से खरीदा था। प्रतिवादी नं. 1 ने वित्तीय संपत्तियों के प्रतिभूतिकरण और पुनर्निर्माण और सुरक्षा हित प्रवर्तन अधिनियम, 2002 (सरफेसी अधिनियम) की धारा 19 के साथ पठित धारा 17(1) के तहत एक आवेदन दायर किया। मामला डीआरएटी और फिर हाईकोर्ट में ले जाया गया। इस बीच संपत्ति बिक गई और प्रतिवादी नं. 3, नीलामी क्रेता ने आवश्यक राशि जमा कर दी।

हालाँकि, डीआरटी ने अपने आदेश दिनांक 25.10.2005 द्वारा उधारकर्ता को बैंक और डेवलपर के पास पूरी राशि और नीलामी क्रेता प्रतिवादी सं. 3 को एक लाख रु. मुआवजे के रूप में. जमा करने का समय दिया। प्रतिवादी नं. 1 ने डीआरएटी के समक्ष अपील दायर की, जिसने एक अंतरिम आदेश द्वारा उसे बैंक के साथ 7.55 लाख रुपये जमा करने का निर्देश दिया, और अपील का निपटारा करते हुए, अन्य बातों के साथ, बैंक को नीलामी-क्रेताप्रतिवादी नं. 3 को 25,60,000/- रुपये वापस करने का निर्देश दिया और निलामी क्रेता प्रतिवादी नं. 3 को अपीलकर्ता-बैंक के खिलाफ किसी भी चूक के लिए कार्रवाई दर्ज करने के लिए स्वतंत्रता प्रदान की। बैंक द्वारा दायर रिट याचिका खारिज कर दी गई।

आंशिक रूप से अपील स्वीकार करते हुये, न्यायालय ने मानाः

1.1 ऋण वसूली न्यायाधिकरण द्वारा आवेदन के निपटान और ऋण वसूली अपीलीय न्यायाधिकरण द्वारा अपील को निपटाने में देरी का तथ्य देश की आर्थिक रीढ़ में क्षरण पैदा करने की प्रभाव क्षमता है। इस तथ्य पर ध्यान देना बिल्कुल जरूरी है कि हालांकि अपील डीआरएटी द्वारा 14.11.2005 को स्वीकृत की गई, फिर भी इसका निस्तारण 20.5.2010 को लगभग साढ़े चार साल बाद किया गया। डीआरएटी, आरडीबी अधिनियम के तहत अपने ऊपर दिए गए दायित्व को पूरी तरह से भूल

गया है और सरफेसी अधिनियम की मुख्य विशेषताओं और मूल उद्देश्य से भी काफी अनजान बना हुआ है। [अनुच्छेद 02, 12]

1.2 सरफेसी अधिनियम का उद्देश्य बैंक को बकाया राशि की शीघ्र वसूली करना है। इस पृष्ठभूमि में, न्यायाधिकरणों से अपेक्षा की जाती है कि वे मामले की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए काफी तत्परता से कार्य करें और यह सुनिश्चित करें कि एक चतुर मुकदमेंबाज विलंबकारी रणनीति का सहारा न ले। न तो डीआरटी और न ही अपीलीय न्यायाधिकरण मामलों को लम्बित करने का जोखिम उठा सकता है क्योंकि इससे कानून का उद्देश्य मूल रूप से विफल हो जाएगा। किसी अपील पर विचार करने वाले न्यायाधिकरण को मात्र मांग किये जाने पर स्थगन की अनुमति नहीं देनी चाहिए। ट्रिब्यूनल के पीठासीन अधिकारी को यह ध्यान में रखना चाहिए कि स्थगन का अनुदान एक अपवाद होना चाहिए और इसे नियमित और यांत्रिक मामले में नहीं दिया जाना चाहिए। [अनुच्छेद 20]

मार्डिया केमिकल्स लिमिटेड व अन्य बनाम भारत संघ व अन्य 2004(3) एससीआर 982 = 2004(4) एससीसी 311; प्राधिकृत अधिकारी, भारतीय आवरसीज बैंक और अन्य बनाम अशोक साॅ मिल 2009 (11) एससीआर 599 = 2009 (8) एससीसी 366; युनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया बनाम सत्यवती टंडन और अन्य 20109 एससीआर 1 = 2010(8) एससीसी 110; ट्रांस्कोर बनाम भारत संघ और अन्य 2006 (9) पुरक एससीआर 785 =

2008(1) एससीसी 125‘ आधिकारिक परिसमापक, उत्तर प्रदेश और उत्तराखण्ड बनाम अल्लाहाबाद बैंक और अन्य (2013) 4 एसएससी 381 - संदर्भित।

1.3 मौजूदा मामले में, कोई कारण नही था कि डीआरएटी मामले को स्थगित करता रहे और अंततः एक अत्यंत संक्षिप्त आदेश पारित करके इसका निपटारा कर दे। डीआरएटी द्वारा इस तरह का चित्रण केवल अधिनियम के तहत उसे सौंपी गई भूमिका और विधायिका द्वारा उस पर दिए गए विश्वास के प्रति उसकी उदासीनता को दर्शाता है। एक उपचारात्मक कदम की आवश्यकता है और डीआरएटी के अध्यक्ष और सदस्य ऐसे विशेष कानूनों, अर्थात् सरफेसी अधिनियम और आरडीबी अधिनियम द्वारा अपेक्षित दायित्वों के प्रति सजग रहने का प्रयास करेंगे। इसके अलावा ट्रिब्यूनल के साथ-साथ डीआरएटी को भी इस अवसर पर आगे आना होगा, क्योंकि इस प्रकार के मुकदमों के फैसले में देरी दीर्घकालिक आपदा लाती है। [अनुच्छेद 20, 21]

1.4 ज्ञात हो, मुख्य उद्देश्य यह देखना है कि बकाया राशि की वसूली, जो किसी भी बैंकिंग संस्थान का आवश्यक कार्य है, ट्रिब्यूनल द्वारा विलंबित चित्रण के कारण रुक न जाए। विधायिका ने आरडीबी अधिनियम की धारा 22 के तहत यह प्रावधान किया है कि डीआरटी और अपीलीय न्यायाधिकरण सिविल प्रक्रिया संहिता द्वारा निर्धारित प्रक्रिया से बंधे नहीं

होंगे, बल्कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों और बनाये गये नियमों के द्वारा निर्देशित होंगे। उन्हें अपनी प्रक्रिया को विनियमित करने की शक्तियां प्रदान की गई हैं जैसी कि उन्हें दी गयी है। ऐसा इसलिए है, क्योंकि उनकी स्थापना का उद्देश्य उनके समक्ष प्रस्तुत आवेदनों और अपीलों का शीघ्र निस्तारण करना है। उनके पास विशेषज्ञता के साथ विशिष्ट संस्थानों का चरित्र है और उन्हें त्वरित तरीके से वाद पर निर्णय लेने का अधिकार क्षेत्र प्रदान किया गया है ताकि व्यापक सार्वजनिक हित, यानी देश की अर्थव्यवस्था को नुकसान न हो। परन्तु हस्तगत प्रकरण में डीआरएटी ने साढ़े चार साल तक अपील का निपटारा नहीं किया। [अनुच्छेद 21]

1.5 न्यायाधिकरणों के लिये प्रक्रिया विस्तृीत रूप से आरडीबी अधिनियम की धारा 19, में प्रावधित की गई है, धारा 19 की उपधारा (25) यह स्पष्ट करती है कि न्यायाधिकरण को अधिनियम के तहत ऐसी शक्ति दी गई है कि ट्रिब्यूनल ऐसे आदेश दे सकता है और ऐसे निर्देश दे सकता है जो उसके आदेशों को प्रभावी बनाने या उसकी प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने या न्याय के उद्देश्य को सुरक्षित करने के लिए आवश्यक या समीचीन हो। न्यायाधिकरण को वैधानिक मापदंडों के भीतर कार्य करना आवश्यक है। ट्रिब्यूनल के पास कोई अंतर्निहित शक्तियाँ नहीं हैं और यह स्पष्ट है कि धारा 19(25) सीमित शक्तियाँ प्रदान करती है। [अनुच्छेद 27]

अपर दोआब शुगर मिल्स लिमिटेड बनाम शाहदरा (दिल्ली) सहारनपुर लाइट रेलवे कंपनी लिमिटेड 1963 एससीआर 333 = भारत संघ बनाम आॅरियंट पेपर व इंडस्ट्रीज लिमिटेड 2009 (16) एससीसी 286; भारत संघ बनाम आर. गांधी, अध्यक्ष मद्रास बार एसोसियशन 2010(6) एससीआर 857 = 2010 (11) एससीसी 1; हरिनगर शुगर मिल्स लिमिटेड बनाम श्याम सुंदर झूंन्झून्वाला 1962 एससीआर 339 = 1961 एआईआर 1669 जसवंत शुगर मिल्स लिमिटेड बनाम लक्ष्मी चंद 1963 पुरक एससीआर 242 = 1963 एआईआर 677, एसोसियेटेड सीमेंट कंपनी लिमिटेड बनाम पी.एन. शर्मा 1965 एससीआर 366 1965; एआईआर 1595 और किहोतो होलोहन बनाम जाचिल्हू 1992 (1) एससीआर 686 = 1992(2) पुरक एससीसी 651 - पर निर्भर।

1.6 पवित्र उद्देश्य के साथ न्यायाधिकरणों की स्थापना की गई है, वह बैंकों और उधारकर्ताओं और किसी तीसरे पक्ष, जिसने कोई ब्याज अर्जित किया है, के बीच विवाद को शांत करना है। उन्हें अधिनियम के तहत प्रदान किए गए एक विशेष तरीके से एक विशेष शक्ति का प्रयोग करने के लिए विशेष विधानों द्वारा अधिकार क्षेत्र प्रदान किया गया है। यह एक अदालत की अलग प्रकृति की भूमिका नहीं निभा सकता जो वास्तव में बैंक के खिलाफ कोई भी कार्रवाई शुरू करने की स्वतंत्रता दे सकती है। उसे केवल उसके समक्ष प्रस्तुत वाद का निर्णय करना आवश्यक है जो उसके अपने क्षेत्र में आता है। यदि यह उसके अधिकार क्षेत्र में नहीं आता है तो ऐसा कहना

आवश्यक है कि वाद उसके अधिकार क्षेत्र में नहीं आता है। नीलामी क्रेता के तरफ से की गई प्रस्तुति को ध्यान में रखते हुए और फिर यह कहने के लिए आगे बढना कि वह बैंक द्वारा की गई किसी भी चूक के लिए उसके खिलाफ कोई भी कार्यवाही करने के लिए स्वतंत्र है, जिसे कानून की कोई मंजूरी नहीं है एवं उक्त अवलोकन पूरी तरह से अधिकार क्षेत्र से रहित है, और तथ्यात्मक परिदृश्य में निस्संदेह पूरी तरह से अनुचित है। इसलिए, अधिकरण द्वारा की गई टिप्पणी अर्थात, ''नीलामी खरीदार को बैंक द्वारा की गई किसी भी चूक के लिए उसके खिलाफ कार्यवाही दर्ज करने की स्वतंत्रता भी दी जाती है।'', को हटाया जाता है। इस तरह की स्वतंत्रता का अनुदान इस तरह के विशेष कानून के तहत अपने सीमित क्षेत्राधिकार के संबंध में ट्रिब्यूनल के क्षेत्राधिकार में नहीं था और आगे, विशेष रूप से, जब बैंक समझौते में पक्षकार नहीं था। उच्च न्यायालय के फैसले को भी रद्द कर दिया जाता है जिसके तहत उसने डीआरएटी द्वारा स्वत्रंता प्रदान करने में हस्तक्षेप करने से इंकार कर दिया है। [अनुच्छेद 30, 31]

1.7 डीआरएटी को उचित तरीके से मामले का निर्णय करना आवश्यक है। यह डी आरटी द्वारा पारित एक आदेश की अपील पर सुनवाई कर रहा है। वह संक्षिप्त आदेश पारित करने का जोखिम नहीं उठा सकता। तथापि न्यायालय निम्न कारणों से प्रकरण को डीआरएटी को नही भेज रहा है, (प) नीलामी खरीदार ने डीआरएटी द्वारा पारित आदेश को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती नहीं दी है और न ही वह इस न्यायालय में आया है और

इसके अलावा बैंक की शिकायत केवल स्वतंत्रता प्रदान करने के संबंध में थी और (पप) समय के साथ बैंक को अपना पैसा वापस मिल गया और संपत्ति का स्वामित्व बदल गया। परिस्थिति को देखते हुये कि डीआरएटी को नये सिरे से अपील के साथ आगे बढ़ने का निर्देश देना बिल्कुल अनावश्यक है। [अनुच्छेद 32]

केस कानून संदर्भ

2004 (3) एससीआर 982	निर्दिष्ट	परिच्छेद 14
2009 (11) एससीआर 599	निर्दिष्ट	परिच्छेद 15
2010 (9) एससीआर 1	निर्दिष्ट	परिच्छेद 16
2006 (9) पुरक एससीआर 785	निर्दिष्ट	परिच्छेद 17
(2013) 4 एससीसी 381	निर्दिष्ट	परिच्छेद 19
1963 एससीआर 333	निर्दिष्ट	परिच्छेद 27
2009 (16) एससीसी 286	निर्दिष्ट	परिच्छेद 27
2010 (6) एससीआर 857	निर्दिष्ट	परिच्छेद 28
1962 एससीआर 339	निर्दिष्ट	परिच्छेद 28
1963 पुरक एससीआर 242	निर्दिष्ट	परिच्छेद 28
1965 एससीआर 366	निर्दिष्ट	परिच्छेद 28
1992 (1) एससीआर 686	निर्दिष्ट	परिच्छेद 28

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2013 की सिविल अपील नंबर 8486।

2010 की रिट याचिका (सी) संख्या 4694 में दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली के निर्णय और आदेश दिनांक 16.07.2010 से।

अपीलकर्ता की ओर से संजय जैन, संजीव सगन, चंद्र भूषण प्रसाद, ए. अंसारी।

प्रतिवादी हेतु जतिन, कृष्णन कुमार, मोहित डी. राम।

न्यायालय का निर्णय न्यायाधीश दीपक मिश्रा द्वारा सुनाया गया।

श्री दीपक मिश्रा, जे. 1. अवकाश स्वीकृत।

2. वर्तमान अपील एक तथ्यात्मक स्कोर दर्शाती है जहां यह न्यायालय यह कहने के लिए बाध्य है कि ऋण वसूली न्यायाधिकरण द्वारा आवेदन के निपटान में देरी और ऋण वसूली अपीलीय न्यायाधिकरण द्वारा अपील को निपटाने में देरी का तथ्य देश की आर्थिक रीढ़ में क्षरण पैदा करने की प्रभाव क्षमता है। यह एक तथ्यात्मक खुलासा करता है जो न केवल हैरान करने वाला है, बल्कि असमंजस की भा वना पैदा करता है जो अंततः किसी को यह पूछने के लिए मजबूर करता हैः वित्तीय संस्थान कब तक इस तरह की शिथिलता झेलते रहेंगे, छोटी-छोटी बातों के कारण सार्वजनिक हित को किस हद तक खतरे में डाला जा सकता है, और कभी-कभी व्यक्तिगत हित को बढ़ावा दिया जाता है। बैंकों पर निहित कठोर शक्तियों

और ऋण लेने वालों के पक्ष में निर्धारित वैधानिक सुरक्षा उपायों को संतुलित करने के नाम पर डिफॉल्टरों को किस हद तक सुरक्षा दी जा सकती है, यहां तक कि यह मानते हुए भी कि कानूनी खामियां और दुरुपयोग हैं, वैधानिक न्यायाधिकरण कब तक कार्रवाई करते हैं? इस तथ्य से बेपरवाह होकर विवाद को शांत करें कि लचीलेपन की अवधारणा किसी भी संपत्ति के मूल्यांकन के साथ अभिन्न रूप से जुड़ी हुई है, किसी को जागने का आह्वान करना ही होगा और हम तस्मात् उत्तिष्ठ कौन्तेय कहकर ऐसा करते हैंय हे पार्थ, जागो, उठो।

3. वर्तमान अपील, विशेष अनुमति द्वारा, 2010 की रिट याचिका (सी) संख्या 4694 में दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और आदेश दिनांक 16.7.2010 के खिलाफ निर्देशित है।

4. जिन तथ्यों को बताया जाना आवश्यक है, वे यह हैं कि अपीलकर्ता -बैंक ने 17.5.1999 को प्रतिवादी नंबर 1 को 12.00 लाख रुपये का गृह ऋण स्वीकृत किया था, जो समान मासिक किश्तों में देय था और इसके बदले में उधारकर्ता ने डेवलपर से खरीदी गई संपत्ति को गिरवी रख दिया था। डेवलपर की ओर से, यहां प्रतिवादी संख्या 2 है। चूंकि प्रतिवादी नंबर 1 किश्तों का भुगतान करने में विफल रहा, इसलिए भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा जारी एनपीए दिशानिर्देशों के अनुसार ऋण खाते को गैर-निष्पादित परिसंपत्ति घोषित कर दिया गया था। 28.12.2012 को अपीलकर्ता-बैंक ने

वित्ती य संपत्तियों के प्रतिभूतिकरण और पुनर्निर्माण और सुरक्षा हित प्रवर्तन अधिनियम, 2002 (संक्षेप में सरफेसी अधिनियम) की धारा 13(2) के तहत प्रतिवादी नंबर 1 को एक नोटिस जारी किया और उसे दिनांक 27.12.2002 तक देय राशि भुगतान करने का निर्देश दिया। चूंकि प्रतिवादी नंबर 1 ने 27.11.2004 तक कोई भुगतान नहीं किया था, इसलिए तहसीलदार, गुडगांव ने जिला मजिस्ट्रेट के आदेश के अनुसार गिरवी रखी संपत्ति पर कब्जा कर लिया और उसे अपीलकर्ता-बैंक को सौंपसौं दिया। 10.3.2005 को अपीलकर्ता-बैंक ने उक्त संपत्ति को बेचने के लिए सार्वजनिक नीलामी के नियमों और शर्तों को बताते हुए प्रमुख समाचार पत्रों में कब्जा-सह-बिक्री नोटिस प्रकाशित किया। उक्त नोटिस के जवाब में प्रतिवादी संख्या 3 ने नीलामी के माध्यम से उक्त संपत्ति खरीदने के लिए अपना बोली प्रपत्र दिनांक 10.3.2005 प्रस्तुत किया। उक्त कार्रवाई को ऋण वसूली न्यायाधिकरण (डीआरटी) के समक्ष सरफेसी अधिनियम की धारा 17(1) सहपठित 19 के तहत एक आवेदन दायर करके चुनौती दी गई थी। आवेदन 15.3.2005 को डीआरटी प्प्, दिल्ली के समक्ष प्रस्तुत किया गया था और संबंधित पीठासीन अधिकारी ने कोई भी आदेश पारित करने से इनकार कर दिया और उक्त आवेदन को किसी अन्य डीआरटी में स्थानांतरित करने के लिए ऋण वसूली अपीलीय न्यायाधिकरण (डीआरएटी) से उचित निर्देश मांगे। चूंकि डीआरएटी द्वारा कोई आदेश पारित नहीं किया गया था, मामला 25.10.2005 को फिर से डीआरटी प्प् के समक्ष रखा

गया था और उस दिन डीआरटी को सूचित किया गया था कि बैंक ने पहले ही संबंधित संपत्ति पर कब्जा कर लिया है और उसे नीलामी में डाल दिया है। बिक्री करना। उधारकर्ता ने 17.5.2005 को उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका दायर की और उच्च न्यायालय ने उधारकर्ता को बैंक के साथ कुछ राशि जमा करने का निर्देश दिया और संपत्ति के संबंध में यथास्थिति बनाए रखने का निर्देश दिया। अंततः उच्च न्यायालय ने दिनांक 25.7.2005 के आदेश द्वारा डीआरटी को केवल दो महीने के भीतर अपील को निपटाने का निर्देश दिया। अंततः रिट याचिका का निपटारा करते हुए उच्च न्यायालय ने कहा कि हालांकि डीआरटी द्वारा कोई आदेश पारित नहीं किया गया था क्योंकि पीठासीन अधिकारी अपीलीय मंच से आदेशों का इंतजार कर रहा था, लेकिन बैंक को उधारकर्ता की संपत्ति बेचने का फैसला नहीं करना चाहिए था, और ऐसा करके उधारकर्ता की अपील को निष्फल किया एवं उधारकर्ता को गैरमुकदमों बनाने का प्रयास किया।

5. ज्ञात हो, डीआरएटी ने अपने आदेश दिनांक 3.6.2005 के तहत मामले को दूसरे ऋण वसूली न्यायाधिकरण को स्थानांतरित कर दिया। चूँकि संपत्ति नीलामी में बेची गई थी, नीलामी क्रेता, तीसरे प्रतिवादी, ने पक्षकार बनने के लिए एक आवेदन दायर किया जिसे अनुमति दे दी गई। डीआरटी के समक्ष उसका कहना था कि उसने 25.60 लाख रुपये की पूरी राशि बैंक में जमा कर दी है और यदि उधारकर्ता अभी भी अपनी संपत्ति बरकरार रखना चाहता है, तो उसे उक्त संपत्ति उससे खरीदनी होगी।

डीआरटी ने अपने आदेश दिनांक 25.10.2005 द्वारा उधारकर्ता द्वारा दायर आवेदन में किए गए दावों, वों बैंक द्वारा दायर उत्तर और रिकॉर्ड पर सबूतों की सराहना करते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि बैंक के खातों के विवरण में कोई गड़बड़ी नहीं थी और उसके बाद तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए उधारकर्ता को बैंक और डेवलपर, मेसर्स यूनिटेक को पूरी राशि का भुगतान और नीलामी क्रेता को मुआवजे के रूप में 1.00 लाख रु. अदा करने के लिए 15 दिन का समय दिया गया। इसके बाद, डीआरटी ने निम्नानुसार निर्देश दियाः -

"यदि आवेदकध्अपीलकर्ता 15 दिनों के भीतर यह राशि जमा करने में विफल रहता है, तो अपीलध्आवेदन को खारिज कर दिया जाएगा और प्रतिवादी नंबर 1 नीलामी खरीदार के पक्ष में बिक्री की पुष्टि करने के लिए स्वतंत्र है। माननीय दिल्ली उच्च न्यायालय के आदेश के अनुसार वर्तमान कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान आवेदक द्वारा जमा की गई राशि का उचित समायोजन किया जाए।"

6. उधारकर्ता ने उक्त आदेश का अनुपालन करने के बजाय, डीआरएटी के समक्ष 2005 की अपील संख्या 267 को प्राथमिकता दी, जिसने 14.11.2005 को अपील स्वीकार कर ली और निम्नलिखित अंतरिम आदेश पारित कियाः -

''अगला आदेश पा रित होने तक, अपीलकर्ता को सीधे प्रथम प्रतिवादी-बैंक में 7.55 लाख रुपये की राशि जमा करनी होगी। हालाँकि, दूसरे और तीसरे प्रतिवादी के पक्ष में आदेश के कार्यान्वयन पर रोक रहेगी।''

7. यहां यह बताना उचित होगा कि अपील दिनांक 07.12.2005 को पोस्ट करने का निर्देश दिया गया था। बैंक ने डीआरएटी के समक्ष एक जवाब दायर किया जिसमें उधारकर्ता द्वारा लगातार डिफॉल्ट पर प्रकाश डाला गया। नीलामी क्रेता, यहां तीसरे प्रतिवा दी, ने डीआरएटी के समक्ष अपील दायर नहीं की, लेकिन 25.1.2006 को सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के तहत एक आवेदन दायर किया। डीआरएटी ने 7.9.2007 को आवेदन पर विचार किया और पाया कि चूंकि क्रेता को पहले ही अपील में एक पक्ष के रूप में शामिल किया जा चुका है, इसलिए उसे अदालत को संबोधित करने का अधिकार होगा और तदनुसार आवेदन का निपटारा कर दिया। जैसा कि तथ्यात्मक वर्णन से पता चलता है कि अपील को समय-समय पर स्थगित कर दिया गया था और अंततः 20.5.2010 को डीआरएटी ने निम्नलिखित आदेश पारित कियाः -

''पक्षकारान के वकील उपस्थित। मैंने उन्हें विस्तार से सुना है। अपीलकर्ता के वकील दंडात्मक ब्याज को घटाकर पूरी राशि का भुगतान करने के लिए तैयार हैं, जिसके लिए उस संदर्भ में कोई प्रावधान नहीं किया गया था। दंड भा ग का कॉलम खाली छोड़ दिया गया था और उसमें कोई राशि का

उल्लेख नहीं किया गया था, इसलिए मेरा मानना है कि अपीलकर्ता को दंडात्मक ब्याज का भुगतान नहीं करना होगा। सहमति के अनुसार शेष राशि का भुगतान आज से 45 दिनों के भीतर बैंक को किया जाना चाहिए।

बिल्डर पहले ही बैंक से 7,11,745/- रुपये की रकम वसूल चुका है। अपीलकर्ता द्वारा उस राशि का भुगतान सहमति के अनुसार 45 दिनों के भीतर सीधे बैंक को किया जाएगा। अपीलकर्ता को बिल्डर को भुगतान की तारीख से 45 दिनों के भीतर भुगतान होने तक 9 प्रतिशत की दर से साधारण ब्याज भी देना होगा।

जैसा कि नीलामी क्रेता द्वारा सहमति व्यक्त की गई है, वह अपीलकर्ता से लागत के रूप में 5 लाख रुपये स्वीकार करने के लिए तैयार है और नीलामी बिक्री के लिए जोर नहीं देगा और अपीलकर्ता के पक्ष में अपने अधिकार सौंप देगा।

उक्त राशि 45 दिनों की अवधि के भीतर इस न्यायालय के रजिस्ट्रार के पास जमा की जानी चाहिए, अन्यथा इस जमा राशि के साथ-साथ ऊपर बताई गई अन्य जमाओं पर भी अपील खारिज कर दी जाएगी। नीलामी क्रेता अपील वापस ले सकता है।

नीलामी क्रेता को बैंक द्वारा की गई किसी भी चूक के लिए बैंक के खिलाफ कार्यवाही करने की भी स्वतंत्रता दी गई है। अपीलकर्ता के साथ-साथ बिल्डर को भी दो महीने के भीतर यानी ऊपर उल्लेखित 45 दिनों की

समाप्ति के बाद अपीलकर्ता के पक्ष में रजिस्ट्री निष्पादित करने की स्वतंत्रता दी जाती है। स्टाम्प शुल्क आदि का भुगतान अपीलकर्ता द्वारा किया जाएगा।

बैंक को दस दिनों के भीतर दंडात्मक धारा को छोड़कर खाते का विवरण प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया है।

बैंक को नीलामी क्रेता द्वारा जमा की गई राशि रु. 25,60,000 ध्- को बैंक के खिलाफ उसके अधिकार पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना 9 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से सामान्य ब्याज के साथ वापस करने का निर्देश दिया जाता है।

मामला निस्तारित हो गया। नीलामी क्रेता और अपीलकर्ता को इस आदेश पर हस्ताक्षर करने का निर्देश दिया जाता है।

8. उपरोक्त आदेश से व्यथित होकर बैंक ने रिट याचिका दायर की और दो तर्क उठाए, अर्थात् (प) डीआरएटी ने एक गुप्त आदेश द्वारा डीआरटी द्वारा पारित एक उचित और विस्तृत आदेश को संशोधित किया था, और (पप) कि डीआरएटी ने तीसरे प्रतिवादी को स्वतंत्रता देने में गलती की थी की प्रतिवादी किसी भी चूक के लिए बैंक के खिलाफ कोई भी कार्यवाही शुरू कर सकता है। उच्च न्यायालय ने, आक्षेपित आदेश द्वारा, पहले पैराग्राफ में दंडात्मक ब्याज के दावे के तत्व से निपटा और राय दी कि बैंक की शिकायत निराधार थी। इसके बाद, नीलामी क्रेता द्वारा बैंक में जमा राशि

पर 9 प्रतिशत ब्याज देने का विज्ञापन देते हुए पाया कि इसमें कोई त्रुटि नहीं है क्योंकि पैसा बैंक के पास पड़ा हुआ था। इसके बाद, रिट अदालत ने निम्नानुसार निरीक्षण कियाः -

''नीलामी क्रेता के लिए विद्वान वकील बताते हैं कि, वास्तव में, 9 प्रतिशत का यह ब्याज वास्तव में पूर्ण मुआवजा नहीं है, बल्कि केवल आंशिक मुआवजा है क्योंकिक्यों नीलामी क्रेता को नीलामी के अनुसार बैंक के खिलाफ उपाय करने की स्वतंत्रता दी गई है क्योंकि निलामी क्रेता के अनुसार इस संपत्ति को याचिकाकर्ता बैंक द्वारा डीआरटी में मालिक और बैंक के बीच लंबित मामले के तथ्य का खुलासा किए बिना नीलाम कर दिया गया था। हमें भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अपने असाधारण रिट क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने का कोई कारण नहीं दिखता है''

9. अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री संजय जैन ने प्रस्तुत किया कि यद्यपि उच्च न्यायालय के समक्ष दो मुद्दे उठाए गए थे, फिर भी वह अपनी राहत को दूसरे तक ही सीमित रखेंगे, अर्थात् तीसरे प्रतिवादी को बैंक की किसी भी चूक के लिए बैंक के खिलाफ कोई भी कार्यवाही शुरू करने की स्वतंत्रता देना। उनके द्वारा आग्रह किया गया है कि उच्च न्यायालय यह राय देकर गलती में पड़ गया है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने का कोई औचित्य

नहीं है, जबकि तथ्यात्मक परिदृश्य डीआरएटी द्वारा इस तरह के अवलोकन को हटाने की गारंटी देता है क्योंकि एक न्यायाधिकरण के पास कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है, ऐसी स्वतंत्रता देने के लिए, विशेषकर, जब उधारकर्ता और नीलामी क्रेता के बीच कोई समझौता हो गया हो। विद्वान वकील यह प्रस्तुत करेंगे कि डीआरएटी ने वास्तव में किसी भी मुद्दे को संबोधित नहीं किया था और, सबसे संक्षिप्त तरीके से एक समझौता दर्ज करने के बाद, उन टिप्पणियों को दर्ज किया जो वास्तव में उच्च न्यायालय द्वारा खारिज किए जाने के योग्य थी। श्री जैन ने आगे कहा कि उच्च न्यायालय को इस तथ्य पर ध्यान देना चाहिए था कि डीआरएटी द्वारा पारित आदेश का पहले ही अनुपालन किया जा चुका है और बैंक को आगे इस मुकदमेबाजी में घसीटना बिल्कुल अनावश्यक है और ऐसा करना सरफेसी अधिनियम की भावना और बैंकों और वित्तीय संस्थानों को शोध्य ऋण की वसूली का अधिनियम, 1993 (संक्षेप में आरडीबी अधिनियम) के उद्येश्य के विपरित है। यह भी तर्क दिया गया है कि डीआरएटी अपीलकर्ता द्वारा की गई प्रार्थना पर ध्यान देने में विफल रहा और बिना किसी स्पष्ट कारण के मामला साढ़े चार साल से अधिक समय तक लंबित रखा गया।

10. प्रतिवादी नंबर 1 की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री मोहित धाम ने तर्क दिया कि उन्होंनेन्हों नेडीआरएटी द्वारा निर्धारित समय के भीतर बैंक का बकाया भुगतान कर दिया था और उसके बाद वित्तीय कठिनाइयों के कारण उन्होंनेन्हों ने संपत्ति को तीसरे पक्ष के पक्ष में स्थानांतरित कर दिया

था। संक्षेप में, विद्वान वकील का कहना है कि घड़ी को पीछे करने से उसके लिए गंभीर खतरा पैदा होने की संभावना है।

11. नीलामी क्रेता की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री जतिन ने कहा कि स्वतंत्रता के आधार पर उन्होंने पहले ही दिल्ली उच्च न्यायालय में एक मुकदमा दायर कर दिया है क्यांेकि बैंक द्वारा जल्दबाजी में यह संकेत दिए बिना कि उधारकर्ता और बैंक के बीच मुकदमा चल रहा था, संपत्ति को निलामी में डाला गया और बैंक द्वारा की गई उक्त कार्यवाही के कारण वह यह विकल्प अपनाने के हकदार हैं। उनका आग्रह है कि यदि संपत्ति को नीलामी में डालने का उक्त तथ्य बता दिया गया होता तो तीसरा प्रतिवादी नीलामी में भाग नहीं लेता। उनका तर्क है कि हर्जाने के उनके दावे को रद्द नहीं किया जा सकता है और इसलिए, उच्च न्यायालय का निर्णय बिल्कुल बचाव योग्य है और इसमें हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नहीं है।

12. इससे पहले कि हम नीलामी क्रेता को ऐसी स्वतंत्रता देने के लिए डीआरएटी के अधिकार क्षेत्र पर ध्यान दें, हम सोचते हैं कि मौजूदा मामले में, इस तथ्य पर ध्यान देना बिल्कुल जरूरी है कि हालांकि अपील डीआरएटी के समक्ष दिनांक 07.11.2005 को दायर की गई थी और 14.11.2005 को स्वीकृत की गई, फिर भी लगभग साढ़े चार साल बाद 20.5.2010 को इसका निस्तारण किया गया। हमें यह कहते हुए दुख हो रहा है कि डीआरएटी, आरडीबी अधिनियम के तहत अपने ऊपर दिए गए

दायित्व को पूरी तरह से भूल गया है और सरफेसी अधिनियम की मुख्य विशेषताओं और मूल उद्देश्य से भी काफी अनजान बना हुआ है।

13. इस संदर्भ में, हम सरफेसी अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों का सार्थक रूप से उल्लेख कर सकते हैं। इसका प्रासंगिक भाग इस प्रकार हैः-

''भारत की अर्थव्यवस्था को तेजी से विकसित करने में सफलता हासिल करने के प्रयासों में वित्तीय क्षेत्र प्रमुख चालकों में से एक रहा है। जबकि भारत में बैंकिंबैं किं ग उद्योग उत्तरोत्तर अंतरराष्ट्री य विवेकपूर्ण मानदंडों और लेखांकन प्रथाओं का अनुपालन कर रहा है, कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जिनमें बैंकिंबैं किं ग और वित्तीय क्षेत्र के पास दुनिया के वित्तीय बाजारों में अन्य प्रतिभागियों की तुलना में समान अवसर नहीं हैं। बैंकों और वित्तीय संस्थानों की वित्तीय संपत्तियों के प्रतिभूतिकरण की सुविधा के लिए कोई कानूनी प्रावधान नहीं है। इसके अलावा, अंतरराष्ट्री य बैंकों के विपरीत, भारत में बैंकों और वित्तीय संस्थानों के पास प्रतिभूतियों पर कब्जा करने और उन्हें बेचने की शक्ति नहीं है। वाणिज्यिक लेनदेन से संबंधित हमारा मौजूदा कानूनी ढांचा बदलती वाणिज्यिक प्रथाओं और वित्तीय क्षेत्र के सुधारों के साथ तालमेल नहीं बिठा पाया है। इसके परिणामस्वरूप डिफॉल्ट ऋणों की वसूली धीमी हो गई है और बैंकों और वित्तीय संस्थानों की गैर-निष्पादित परिसंपत्तियों का स्तर बढ़ गया है। बैंकिंग क्षेत्र में सुधारों की जांच के उद्देश्य से केंद्र सरकार द्वारा गठित नरसिम्हम समिति प् और प्प्

और अंध्यारुजिना समिति ने इन क्षेत्रों के संबंध में कानूनी प्रणाली में बदलाव की आवश्यकता पर विचार किया है।

14. मार्डिया केमिकल्स लिमिटेड और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य (2004) 4 एससीसी 311 में, उद्देश्यों और कारणों के विवरण का उल्लेख करने के बाद, इस न्यायालय ने इस दलील पर विचार किया कि एक अनुबंध के तहत निजी पार्टियों के मौजूदा अधिकारों में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है, विशेषकर, एक पक्ष को दूसरे के मुकाबले लाभप्रद स्थिति में लाकर। उस संदर्भ में, तीन-न्यायाधीशों की पीठ ने इस प्रकार कहाः -

''जैसा कि पहले भी चर्चा की गई है, यह देखा जा सकता है कि यद्यपि लेनदेन में एक निजी अनुबंध का चरित्र हो सकता है, फिर भी इस तरह के लेनदेन के पीछे देश की अर्थव्यवस्था पर दूरगामी प्रभाव डालने वाले महान महत्व के प्रश्न को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है, इसे पूरी तरह से व्यक्तिगत लेन-देन तक ही सीमित रखना, विशेष रूप से तब जब वित्त पोषण बैंकों और वित्तीय संस्थानों के माध्यम से होता है, जो सामान्य रूप से लोगों के लिए धन का उपयोग करते है, अर्थात, बैंकों में जमा कर्ताओं और वित्तीय संस्थानों के निपटान में सार्वजनिक धन। इसलिए, जहां भी इतने बड़े पैमाने पर सार्वजनिक हित शा मिल है और सार्वजनिक उद्देश्यों को पूरा करने वाली किसी वस्तु को प्राप्त करना आवश्यक हो सकता है, व्यक्तिगत अधिकारों को छोड़ना पड़ सकता है। सार्वजनिक हित को सदैव

निजी हित से ऊपर माना गया है। किसी व्यक्ति का हित, कुछ हद तक, प्रभावित हो सकता है, लेकिन इसमें देश के सामाजिक-आर्थिक अभियान पर प्रभाव डालते हुए सार्वजनिक हित पर कब्जा करने की क्षमता नहीं हो सकती है।

दोनों पहलू आपस में जुड़े हुए हैं जिन्हें अलग करना मुश्किल है। उक्त मामले में आगे नियम इस प्रकार थेः-

81. निर्णय में की गई चर्चा और पूर्ववर्ती पैराग्राफ में निहित निष्कर्षों और निर्देशों के मद्देनजर, हम मानते हैं कि उधारकर्ताओं को ऋण वसूली न्यायाधिकरण के समक्ष मामले को निपटाने के लिए एक उचित सौदा और अवसर मिलेगा। कुछ प्रावधानों का प्रभाव कुछ उधारकर्ताओं के लिए थोड़ा कठोर हो सकता है, लेकिन इस आधार पर अधिनियम के विवादित प्रावधानों को इस तथ्य के मद्देनजर असंवैधानिक नहीं कहा जा सकता है कि अधिनियम का उद्देश्य एनपीए के रूप में घोषित किया गया बकाया ऋण की शीघ्र वसूली करना है और पूंजीगत तरलता और संसाधनों की बेहतर उपलब्धता को अर्जित करना हैं जिससे देश की अर्थव्यवस्था के विकास और सामान्य रूप से लोगों के कल्याण में मदद मिलेगी, जो सार्वजनिक हित में काम आएगा।''

15. प्राधिकृत अधिकारी, इंडियन ओवरसीज बैंक और अन्य बनाम अशोक सॉ मिल एआईआर 2009 एससी 2420: (2009) 8 एससीसी 366 मामले में, हालांकि एक अलग संदर्भ में, न्यायालय ने इस प्रकार व्यक्त किया हैः -

"33. यह स्पष्ट है कि सरफेसी अधिनियम को लागू करते समय विधायिका वित्तीय संपत्तियों के प्रतिभूतिकरण और पुनर्निर्माण को विनियमित करने और सुरक्षा हित को लागू करने के उपायों से चिंतित थी। यह अधिनियम बैंकों और वित्तीय संस्थानों को दीर्घकालिक परिसंपत्तियों का एहसास करने, तरलता, परिसंपत्ति देयता बेमेल की समस्याओं का प्रबंधन करने और प्रतिभूतियों पर कब्जा करने, उन्हें बेचने और पुनर्निर्माण की वसूली के उपायों को अपनाकर गैर- निष्पादित परिसंपत्तियों को कम करने की शक्तियों का उपयोग करके वसूली में सुधार करने में सक्षम बनाता है। . इसके बाद, बेंच ने इस प्रकार कहाः -

36. इसलिए, विधायिका का इरादा स्पष्ट है कि जहां बैंकों और वित्तीय संस्थानों को अपने बकाए की वसूली के लिए कठोर शक्तियां प्रदान की गई हैं, वही ऐसी शक्तियों के किसी भी त्रुटिपूर्ण या गलत उपयोग को सुधारने के लिए डीआरटी को निहित करके सुरक्षा उपाय भी प्रदान किए गए हैं जिसमें डीआरटी को मामले में न्यायनिर्णयन करने के बाद ऐसी किसी भी कार्यवाही को अमान्य घोषित करने और कब्जा बहाल करने का अधिकार भी होगा, भले ही कब्जा स्थानांतरित व्यक्ति को सौंप दिया गया हो।"

16. यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया बनाम सत्यवती टंडन और अन्य एआईआर 2010 एससी 3413: (2010) 8 एससीसी 110 में, इस न्यायालय ने सरफेसी अधिनियम लाने के उद्देश्य को दोहराया और उस संदर्भ में ट्रिब्यूनल की भूमिका को निम्नानुसार देखाः -

"23. धारा 17 की उप-धारा (2) ट्रिब्यूनल पर यह वि चार करने का कर्तव्य रखती है कि सुरक्षा हित को लागू करने के लिए सुरक्षित ऋणदाता द्वारा उठाए गए उपाय अधिनियम के प्रावधानों और उसके तहत बनाए गए नियमों के अनुसार हैं या नहीं।हीं यदि ट्रिब्यूनल, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों और पक्षों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों की जांच करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि सुरक्षित ऋणदाता द्वारा किए गए उपाय धारा 13 की उप-धारा (4) के अनुरूप नहीं हैं, तो वह सुरक्षित ऋणदाता को व्यवसाय का प्रबंधन या सुरक्षित संपत्तियों का कब्जा उधारकर्ता को बहाल करने का निर्देश दें सकता है। दूसरी ओर, यदि ट्रिब्यूनल को पता चलता है कि धारा 13 की उप-धारा (4) के तहत सुरक्षि त लेनदार द्वारा लिया गया सहारा अधिनियम के प्रावधानों और उसके तहत बनाए गए नियमों के अनुसार है, तो, किसी भी बात के बावजूद फिलहाल लागू होने वाले अन्य कानून के अनुसार, सुरक्षित ऋणदाता अपने सुरक्षित ऋण की वसूली के लिए धारा 13(4) में निर्दिष्ट एक या अधिक उपायों का सहारा ले सकता है।

24. धारा 17 की उपधारा (5) साठ दिनों की समय-सीमा निर्धारित करती है जिसके भीतर धारा 17 के तहत किए गए आवेदन का निस्तारण करना आवश्यक है। इस उप-धारा के प्रावधान में समय के विस्तार की परिकल्पना की गई है, लेकिन किसी आवेदन के निर्णय के लिए बाहरी सीमा चार महीने है। यदि ट्रिब्यूनल अधिकतम चार महीने की अवधि के भीतर आवेदन पर निर्णय लेने में विफल रहता है, तो कोई भी पक्ष ट्रिब्यूनल को आवेदन के शीघ्र निस्तारण के लिए निर्देश जारी करने के लिए अपीलीय ट्रिब्यूनल में जा सकता है।

17 . ट्रांसकोर बनाम भारत संघ और अन्य एआईआर 2007 एससी 712: (2008) 1 एससीसी 125 में , न्यायालय ने सरफेसी अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों के बारे में चर्चा करते हुए, इस प्रकार व्यक्त कियाः

> "60. मुद्रास्फीति वाली अर्थव्यवस्था में किसी परिसंपत्ति का मूल्य समय कारक द्वारा कम किया जाता है। बैंकध् एफआई के पक्ष में बना ए गए अधिकार में उधारकर्ता की ओर से यह दायित्व शामिल होता है कि वह यह सुनिश्चित करे कि सुरक्षा का मूल्य समय के साथ कम न हो, जो समय पर ऋण चुकाने में उसकी विफलता के कारण होता है।
>
> हमने उपरोक्त न्यायिक दृष्टांतो को यह दिखाने के लिए संदर्भित किया है कि आवेदन और अपील का त्वरित निस्तारण

अधिनियम की मौलिक वस्तुएं हैं और समय कारक का अर्थव्यवस्था के निर्वाह के साथ अटूट संबंध है।

18. सरफेसी अधिनियम के उद्देश्य और विधायी इरादे के बारे में चर्चा करने के बाद, हम त्क्ठ अधिनियम के विधायी उद्देश्य का उल्लेख करना उचित समझते हैं। हम इस बात से पूरी तरह परिचित हैं कि यह पहले का कानून था और चूंकि यह उतना प्रभावी नहीं हो सका, इसलिए सरफेसी कानून बनाया गया। उक्त कानून के उद्देश्य और यह कैसे काम करता है, इस पर विचार करते हुए, यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया बनाम सत्यवती टंडन और अन्य (सुप्रा) में इस न्यायालय ने देखा है कि डीआरटी अधिनियमों के प्रावधानों का विश्लेषण उस अधिनियम का प्राथमिक उद्देश्य बैंकों और वित्तीय संस्था नों के बकाया की शीघ्र वसूली के लिए विशेष मशीनरी के निर्माण की सुविधा प्रदान करना था। यही कारण है कि डीआरटी अधिनियम न केवल न्यायाधिकरणों और अपीलीय न्यायाधिकरणों की स्थापना के लिए अधिकार क्षेत्र, शक्तियों और अधिकार के साथ बैंकों या वित्तीय संस्थानों द्वारा किए गए आवेदनों का सारांश निर्णय लेने का प्रावधान करता है और ट्रिब्यूनल या अपीलीय ट्रिब्यूनल द्वारा निर्धारित राशि की वसूली के तरीकों को भी निर्दिष्ट करता है, लेकिन धारा 17 में निर्दिष्ट मामलों के संबंध में सुप्रीम कोर्ट और

उच्च न्यायालयों को छोड़कर सभी अदालतों के अधिकार क्षेत्र पर भी रोक लगाता है। इसके बाद डिवीजन बेंच ने इस प्रकार कहाः -

"7. कुछ वर्षों तक, नई व्यवस्था ने अच्छा काम किया और न्यायाधिकरणों में नियुक्त अधिकारियों ने यह सुनिश्चित करने के लिए बड़े उत्साह के साथ काम किया कि बैंकों और वित्तीय संस्थानों की बकाया राशि की वसूली से जुड़े मामलों का निर्णय शीघ्रता से किया जाए। हालाँकि, समय बीतने के साथ, ट्रिब्यूनल के समक्ष कार्यवाही नियमित अदालतों का पर्याय बन गई और उधारकर्ताओं और डिफॉल्टरों का प्रतिनिधित्व करने वाले वकीलों ने ऐसे मामलों के शीघ्र निर्णय में बाधा डालने के लिए हर संभव तंत्र और विलंब रणनीति का इस्तेमाल किया। सरकार द्वारा अपनाई गई त्रुटिपूर्ण नियुक्ति प्रक्रिया ने ट्रिब्यूनल के समक्ष दायर मामलों के निपटान में देरी की समस्या में बहुत योगदान दिया।

19. आधिकारिक परिसमापक, उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड बनाम इलाहाबाद बैंक और अन्य एआईआर 2013 एससी 1823: (2013) 4 एससीसी 381 में, हालांकि एक अलग संदर्भ में, इस न्यायालय ने देखा कि आरडीबी अधिनियम इस पृष्ठभूमि में अधिनियमित किया गया है कि बैंक और वित्तीय संस्थानों को

ऋणों की वसूली और उनके साथ ली गई प्रतिभूतियों के प्रवर्तन में काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा था और बैंकों और वित्तीय संस्थानों के कारण ऋणों की वसूली के लिए जो प्रक्रिया अपनाई जा रही थी, उसके परिणामस्वरूप धन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा अवरुद्ध हो गया था। अनुत्पादक परिसंपत्तियों में धन को अवरुद्ध करने पर जोर दिया गया है, जिसका मूल्य समय बीतने के साथ बिगड़ता जाता है। इसके अलावा, आरडीबी अधिनियम का उद्देश्य, जैसा कि स्पष्ट है, बैंकों और वित्तीय संस्थानों के कारण ऋणों की त्वरित न्यायनिर्णयन और वसूली के लिए न्यायाधिकरणों और अपीलीय न्यायाधिकरणों की स्थापना और उससे जुड़े या प्रासंगिक मामलों के लिए प्रावधान करना है। आरडीबी अधिनियम की धारा 17 न्यायाधिकरणों के अधिकार क्षेत्र, शक्तियों और प्राधिकार से संबंधित है। यह ट्रिब्यूनल को ऐसे बैंकों और वित्तीय संस्थानों के बकाया ऋणों की वसूली के लिए बैंकों और वित्तीय संस्थानों से आवेदनों पर विचार करने और निर्णय लेने का अधिकार क्षेत्र प्रदान करता है।

20. इस प्रकार, इस कानून का उद्देश्य बैंक को बकाया राशि की शीघ्र वसूली करना है। इस पृष्ठभूमि में, न्यायाधिकरणों से अपेक्षा की जाती है कि वे मामले की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए काफी तत्परता से कार्य करें और यह सुनिश्चित करें कि एक चतुर मुकदमेंबाज विलंबकारी रणनीति का

सहारा न ले। यह उचित रूप से नोट किया जा सकता है सरफेसी अधिनियम के तहत बैंक द्वारा की गई कार्यवाही डीआरटी के समक्ष चुनौती और डीआरएटी में आगे अपील के अधीन है। न तो डीआरटी और न ही अपीलीय न्यायाधिकरण मामलों को लम्बित करने का जोखिम उठा सकता है क्योंकि इससे कानून का उद्देश्य मूल रूप से विफल हो जाएगा। मौजूदा मामले में, हम वास्तव में यह समझने में विफल हैं कि डीआरएटी को मामले को स्थगित करने और अंततः एक अत्यंत संक्षिप्त आदेश पारित करके इसका निपटारा करने के लिए किसने बाध्य किया। यह वाकई हैरान करने वाला है। किसी अपील पर विचार करने वाले न्यायाधिकरण को मात्र मांग किये जाने पर स्थगन की अनुमति नहीं देनी चाहिए। ट्रिब्यूनल के पीठासीन अधिकारी को यह ध्यान में रखना चाहिए कि स्थगन का अनुदान एक अपवाद होना चाहिए और इसे नियमित और यांत्रिक मामले में नहीं दिया जाना चाहिए। मौजूदा मामले में, डीआरएटी द्वारा इस तरह का चित्रण केवल अधिनियम के तहत उसे सौंपी गई भूमिका और विधायिका द्वारा उस पर दिए गए विश्वास के प्रति उसकी उदासीनता को दर्शाता है। एक उपचारात्मक कदम की आवश्यकता है और हम उम्मीद करते हैं कि डीआरएटी के अध्यक्ष और सदस्य ऐसे विशेष कानूनों, अर्थात् सरफेसी अधिनियम और आरडीबी अधिनियम द्वारा अपेक्षित दायित्वों के प्रति सजग रहने का प्रयास करेंगे।

21 . ज्ञात हो, मुख्य उद्देश्य यह देखना है कि बकाया राशि की वसूली, जो किसी भी बैंकिंग संस्थान का आवश्यक कार्य है, ट्रिब्यूनल द्वारा विलंबित चित्रण के कारण रुक न जाए। यह ध्यान देने योग्य है कि विधायिका ने आरडीबी अधिनियम की धारा 22 के तहत अपने विवेक से यह प्रावधान किया है कि डीआरटी और अपीलीय न्यायाधिकरण सिविल प्रक्रिया संहिता द्वारा निर्धारित प्रक्रिया से बंधे नहीं होंगे, बल्कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों और बनाये गये नियमों के द्वारा निर्देशित होंगे। उन्हें अपनी प्रक्रिया को विनियमित करने की शक्तियां प्रदान की गई हैं जैसा कि उन्हें दिया गया है। ऐसा इसलिए है, क्योंकि उनकी स्थापना का उद्देश्य उनके समक्ष प्रस्तुत आवेदनों और अपीलों का शीघ्र निस्तारण करना है। उनके पास विशेषज्ञता के साथ विशिष्ट संस्थानों का चरित्र है और उन्हें त्वरित तरीके से वाद पर निर्णय लेने का अधिकार क्षेत्र प्रदान किया गया है ताकि व्यापक सार्वजनिक हित, यानी देश की अर्थव्यवस्था को नुकसान न हो। लेकिन, एक गर्भवती महिला के मामले में डीआरएटी ने साढ़े चार साल तक अपील का निपटारा नहीं किया। हम केवल यह कह सकते हैं कि उपचारात्मक कदम के अलावा ट्रिब्यूनल के साथ-साथ डीआरएटी को भी इस अवसर पर आगे आना होगा, क्योंकि इस प्रकार के मुकदमों के फैसले में देरी दीर्घकालिक आपदा लाती है। एक मीठी नींद से काम नहीं चलेगा।

22. बैंक की शिकायत यहीं खत्म नहीं होती. इसके विपरीत यह अंत की शुरुआत है। अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील श्री जैन ने शिकायत पर

जोर देते हुए कहा कि डीआरएटी उधारकर्ता द्वारा की गई प्रार्थना से आगे निकल गया क्योंकि उधारकर्ता ने अनिवार्य रूप से मुआवजा देने और वैकल्पिक रूप से साठ दिनों के लिए समय बढ़ाने की प्रार्थना की थी। श्री जैन का कहना है कि ट्रिब्यूनल के समक्ष अपील लंबित होने के कारण, समय का विस्तार पूरी तरह से महत्वहीन हो गया है। इसके बावजूद, जैसा कि आदेश से संकेत मिलता है, नीलामी खरीदार और उधारकर्ता के बीच एक आम सहमति बन गई थी और यह आदेश से स्पष्ट है, क्योंकि डीआरएटी ने निर्देश दिया था कि नीलामी खरीदार और उधारकर्ता आदेश पर हस्ताक्षर करेंगे। बैंक उक्त समायोजन या सर्वसम्मति का पक्षकार नहीं था। बैंक को केवल 9 प्रतिशत ब्याज के साथ राशि वापस करने का निर्देश दिया गया था और यह बिना यह पता लगाए किया गया था कि बैंक वास्तव में गलती पर था या नहीं, और इससे भी अधिक यह तब किया गया, जब उच्च न्यायालय के निर्देशानुसार पैसा वापस करने या राशि जमा करने में उधारकर्ता ने एक गैर उदासीन रवैया प्रदर्शित किया था। विद्वान वरिष्ठ वकील उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश की भी आलोचना करते हैं, जिसने यह कहते हुए मुख्य मुद्दे को संबोधित करने से इन्कार कर दिया है कि संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत असाधारण रिट क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने की कोई आवश्यकता नहीं है। विद्वान वरिष्ठ वकील यह प्रस्तुत करेंगे कि उच्च न्यायालय इस बात की जांच करने के अपने संवैधानिक कर्तव्य में विफल रहा है कि क्या इस तरह के विशेष और प्रतिबंधित

क्षेत्राधिकार के तहत ट्रिब्यूनल द्वारा वर्तमान प्रकृति की स्वतंत्रता दी जा सकती थी।

23 . वर्तमान में सरफेसी अधिनियम की धारा 17 अधिकार क्षेत्र के दायरे में किसी भी व्यक्ति को, जिसमें उधारकर्ता भी शामिल है, सुरक्षित ऋणदाता द्वारा उठाए गए धारा 13 की उप-धारा (4) में निर्दिष्ट किसी भी उपाय से पीड़ित होने पर इस तरह के उपाय किए जाने की तारीख से 45 दिनों के भीतर क्षेत्राधिकार वाले डीआरटी को एक आवेदन प्रस्तुत करने की अनुमति देता है। धारा 17 की उप-धारा (3) डीआरटी को सरफेसी अधिनियम की धारा 13(4) के आधार पर सुरक्षित लेनदार द्वारा की गई कार्रवाई और किए गए लेनदेन पर सवाल उठाने का अधिकार देती है। प्राधिकृत अधिकारी, इंडियन ओवरसीज बैंक और अन्य बनाम अशोक सॉ मिल (सुप्रा) में यह माना गया है कि धारा 17 में उप-धारा (3) को शामिल करने के आधार पर विधायिका डीआरएटी को उचित मामलों में बिक्री सहित लेन-देन को रद्द करना और उधारकर्ता को कब्जा बहाल करने का अधिकार देने की हद तक चली गई। सरफेसी अधिनियम की धारा 18 ऋण वसूली न्यायाधिकरण द्वारा दिए गए किसी भी आदेश के खिलाफ अपीलीय प्राधिकारी के पास अपील का प्रावधान करती है। कहने की जरूरत नहीं है कि ऋण वसूली न्यायाधिकरण का वही अधिकार क्षेत्र है जो आरडीबी अधिनियम की धारा 17 के तहत दिया गया है। इस संदर्भ में, सरफेसी अधिनियम की धारा 19 पुनः प्रस्तुत करने योग्य हैः -

19. कुछ मामलों में मुआवजा और लागत प्राप्त करने का उधारकर्ता का अधिकार। यदि धारा 17 या धारा 17ए के तहत किए गए आवेदन पर ऋण वसूली न्यायाधिकरण या जिला न्यायाधीश की अदालत या धारा 18 या धारा 18ए के तहत की गई अपील पर अपीलीय न्यायाधिकरण या उच्च न्यायालय यह मानता है कि सुरक्षित संपत्तियों पर सुरक्षित ऋणदाता का कब्जा इस अधिनियम के प्रावधानों और इसके तहत बनाए गए नियमों के अनुरूप नहीं है तब सुरक्षित ऋणदाताओं को संबंधित उधारकर्ताओं को ऐसी सुरक्षित संपत्ति वापस करने का निर्देश देता है, तब ऐसा उधारकर्ता ऐसे मुआवजे और लागत के भुगतान का हकदार होगा जैसा कि न्यायाधिकरण या जिला न्यायाधीश का न्यायालय या अपीलीय न्यायाधिकरण या धारा 18 बी में निर्दिष्ट उच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित किया जा सकता है।

24. हमने उपरोक्त अनुभाग को यह इंगित करने के लिए पुनः प्रस्तुत किया है कि के विधायिका मुआवजा और लागत के अनुदान हेतु उधारकर्ता की याचिका की सुनवायी हेतु डीआरटी और डीआरएटी को अधिकार क्षेत्र प्रदान करने के लिये जरिये प्रतिस्थापन यह प्रावधान वर्ष 2004 के अधिनियम 30 के जरिये लायी है जो दिनांक 11.11.2004 से प्रभावी है।

25. इस समय, हम यह स्पष्ट कर सकते हैं कि हम बार में प्रचारित मुआवजे और क्षति के बीच सूक्ष्म अंतर पर ध्यान केंद्रित करने का इरादा नहीं रखते हैं क्योंकिक्यों इस मामले में इसकी आवश्यकता नहीं है। मामले

का जोर इस बात पर है कि क्या डीआरएटी के पास कोई स्वतंत्रता देने का अधिकार क्षेत्र है, और इससे भी अधिक, ऐसे मामले में जब उधारकर्ता और नीलामी खरीदार ने समझौता किया हो। जैसा कि पहले कहा गया है, बैंक समझौते में पक्षकार नहीं था।

26 . आरडीबी अधिनियम की धारा 19, अधिनियम के अध्याय प्ट में आती है, न्यायाधिकरणों की प्रक्रिया से संबंधित है। धारा 19 की उपधारा (25) इस प्रकार हैः-

> ''(25) ट्रिब्यूनल ऐसे आदेश दे सकता है और ऐसे निर्देश दे सकता है जो उसके आदेशों को प्रभावी बनाने या उसकी प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने या न्याय के उद्देश्य को सुरक्षित करने के लिए आवश्यक या समीचीन हो।''

27. उपरोक्त प्रावधान यह बिल्कुल स्पष्ट करता है कि ट्रिब्यूनल को कानून के तहत ऐसे अन्य आदेश पारित करने और अपने आदेशों को प्रभावी बनाने या अपनी प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने या न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए ऐसे निर्देश देने की शक्ति दी गई है। इस प्रकार, न्यायाधिकरण को वैधानिक मापदंडों के भीतर कार्य करना आवश्यक है। ट्रिब्यूनल के पास कोई अंतर्निहित शक्तियाँ नहीं हैं और यह स्पष्ट है कि धारा 19(25) सीमित शक्तियाँ प्रदान करती है। इस संदर्भ में, हम अपर दोआब शुगर मिल्स लिमिटेड बनाम शाहदरा (दिल्ली) सहारनपुर लाइट

रेलवे कंपनी लिमिटेड, एआईआर 1963 एससी 217 मामले में तीन न्यायाधीशों की बेंच के फैसले का उल्लेख कर सकते हैं। जिसमें यह माना गया है कि जब ट्रिब्यूनल को रिफंड के लिए निर्देश देने का अधिकार क्षेत्र नहीं दिया गया है, तो वह ऐसा नहीं कर सकता है। उक्त सिद्धांत का पालन यूनियन ऑफ इंडिया बनाम ओरिएंट पेपर एंड इंडस्ट्रीज लिमिटेड, (2009) 16 एससीसी 286 में किया गया है ।

28. यूनियन ऑफ इंडिया बनाम आर. गांधी, अध्यक्ष, मद्रास बार एसोसिएशन, (2010) 11 एससीसी 1 में संविधान पीठ ने हरिनगर शुगर मिल्स लिमिटेड बनाम श्याम सुंदर झुनझुनवाला एआईआर 1961 एससी मामले में हिदायतुल्ला, जे. की राय का जिक्र करने के बाद एवं जसवन्त शुगर मिल्स लिमिटेड बनाम लक्ष्मी चंद एआईआर 1963 एससी 677, एसोसिएटेड सीमेंट कंपनी लिमिटेड बनाम पीएन शर्मा, एआईआर 1965 एससी 1595 और किहोटो होलोहन बनाम जाचिल्हू एआईआर 1993 एससी 412: 1992 सप्लिमेंट (2) एससीसी 651 में फैसले का अवलोकन करने के बाद , इस प्रकार फैसला सुनाया कि:-

> "45. हालाँकि अदालतें और न्यायाधिकरण दोनों न्यायिक शक्ति का प्रयोग करते हैं और समान कार्य करते हैं, फिर भी अदालतों और न्यायाधिकरणों के बीच कुछ सुप्रसिद्ध अंतर हैं। वे हैं|"

(i) अदालतें राज्य द्वारा स्थापित की जाती हैं और उन्हें सामान्य रूप से न्याय प्रशासन के लिए राज्य की अंतर्निहित न्यायिक शक्ति सौंपी जाती है। न्यायाधिकरण की स्थापना एक कानून के तहत की जाती है जो उक्त कानून के तहत उत्पन्न होने वाले विवादों, या एक निर्दिष्ट प्रकृति के विवादों पर निर्णय लेने के लिए की जाती है। इसलिए, सभी अदालतें अधिकरण हैं। लेकिन सभी न्यायाधिकरण अदालतें नहीं हैं।

(ii) अदालतें विशेष रूप से न्यायाधीशों द्वारा संचालित होती हैं। न्यायाधिकरण में एकमात्र सदस्य के रूप में एक न्यायाधीश हो सकता है, या एक न्यायिक सदस्य और एक तकनीकी सदस्य का संयोजन हो सकता है जो उस क्षेत्र का विशेषज्ञ हो जिससे न्यायाधिकरण संबंधित है। कुछ अत्यधिक विशिष्ट तथ्य-खोज न्यायाधिकरणों में केवल तकनीकी सदस्य हो सकते हैं, लेकिन वे दुर्लभ हैं और अपवाद हैं।

(iii) जबकि अदालतें विस्तृत वैधानिक प्रक्रियात्मक नियमों द्वारा शासित होती हैं, विशेष रूप से सिविल प्रक्रिया संहिता और साक्ष्य अधिनियम, जिसके लिए निर्णय लेने में एक विस्तृत प्रक्रिया की आवश्यकता होती है, ट्रिब्यूनल आम तौर पर केवल जहां आवश्यक है सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों को लागू करके अपनी प्रक्रिया को विनियमित करते हैं, साक्ष्य अधिनियम के सख्त नियमों द्वारा प्रतिबंधित हुए बिना।''

29. संविधान पीठ द्वारा जिन सिद्धांतों को सामने रखा गया है, उनसे यह स्पष्ट है कि उक्त कानून के तहत उत्पन्न होने वाले विवादों पर निर्णय लेने के लिए एक कानून के तहत एक न्यायाधिकरण की स्थापना की जाती है। आरडीबी अधिनियम के तहत न्यायाधिकरण की स्थापना एक विशिष्ट उद्देश्य से की गई है और हमने पहले ही इस पर ध्यान केंद्रित किया है। इसका कर्तव्य यह देखना है कि व्यापक जनहित को ध्यान में रखते हुए विवादों का शीघ्र निपटारा किया जाए। यह ग्राफिक रूप से भी स्पष्ट है कि ट्रिब्यूनल की भूमिका तकनीकीताओं से बंधी नहीं है। ट्रिब्यूनल को विशेष का नूनों से उत्पन्न होने वाले वास्तविक विवाद पर ध्यान देने और प्राथमिकता देने की आवश्यकता है। जैसा कि पहले कहा गया है, यह वास्तव में प्रक्रियात्मक कानून के बंधनों से मुक्त है और केवल निष्पक्ष खेल और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों और इसके द्वारा गठित नियमों द्वारा निर्देशित है। आरडीबी अधिनियम की धारा 19 में न्यायाधिकरणों की प्रक्रिया को विस्तृत रूप से बताया गया है।

30. यहां यह ध्यान रखना उचित है कि सरफेसी अधिनियम की धारा 34 सिविल न्यायालय के अधिकार क्षेत्र पर रोक लगाती है। इसे इस प्रकार पढ़ा जाता हैः-

“34. सिविल न्यायालय का क्षेत्राधिकार नहीं होना - किसी भी सिविल अदालत के पास किसी भी दावे के संबंध में किसी भी मुकदमे या कार्यवाही

पर विचार करने का अधिकार क्षेत्र नहीं होगा, जिसे निर्धारित करने के लिए ऋण वसूली न्यायाधिकरण या अपीलीय न्यायाधिकरण को इस अधिनियम के तहत या उसके तहत सशक्त किया गया है और किसी भी अदालत या अन्य प्राधिकारी द्वारा कोई निषेधाज्ञा नहीं दी जाएगी। इस अधिनियम द्वारा या इसके तहत या बैंकों और वित्तीय संस्था नों को देय ऋणों की वसूली अधिनियम, 1993 (1993 का 51) के तहत प्रदत्त किसी भी शक्ति के अनुसरण में की गई या की जाने वाली कोई भी कार्यवाही के संबंध में।''

आरडीबी अधिनियम की धारा 34 में प्रावधान है कि उक्त अधिनियम का सर्वव्यापी प्रभाव होगा। हमने उपरोक्त प्रावधानों का उल्लेख केवल इस बात पर प्रकाश डालने के लिए किया है कि जिस पवित्र उद्देश्य के साथ न्यायाधिकरणों की स्थापना की गई है, वह बैंकों और उधारकर्ताओं और किसी तीसरे पक्ष, जिसने कोई ब्याज अर्जित किया है, के बीच विवाद को शांत करना है। उन्हें अधिनियम के तहत प्रदान किए गए एक विशेष तरीके से एक विशेष शक्ति का प्रयोग करने के लिए विशेष विधानों द्वारा अधिकार क्षेत्र प्रदान किया गया है। यह एक अदालत की अलग प्रकृति की भूमिका नहीं निभा सकता जो वास्तव में बैंक के खिलाफ कोई भी कार्रवाई शुरू करने की स्वतंत्रता दे सकती है। उसे केवल उसके समक्ष प्रस्तुत वाद का निर्णय करना आवश्यक है जो उसके अपने क्षेत्र में आता है। यदि यह उसके अधिकार क्षेत्र में नहीं आता है तो ऐसा कहना आवश्यक है कि वाद उसके अधिकार क्षेत्र में नहीं आता है। नीलामी क्रेता के तरफ से की गई

प्रस्तुति को ध्यान में रखते हुए और फिर यह कहने के लिए आगे बढना कि वह बैंक द्वारा की गई किसी भी चूक के लिए उसके खिलाफ कोई भी कार्रवाई करने के लिए स्वतंत्र है, जिसे कानून की कोई मंजूरी नहीं है एवं उक्त अवलोकन पूरी तरह से अधिकार क्षेत्र से रहित है, और तथ्यात्मक परिदृश्य में निस्संदेह पूरी तरह से अनुचित है। इसलिए, हमें अधिकरण द्वारा की गई इस टिप्पणी को हटाने में कोई झिझक नहीं है अर्थात, ''नीलामी खरीदार को बैंक द्वारा की गई किसी भी चूक के लिए उसके खिलाफ कार्रवाई दर्ज करने की स्वतंत्रता भी दी जाती है।''

31. जिन कारणों पर टिप्पणी को हटाने का निर्देश दिया गया है उन्ही कारणों पर हम उच्च न्यायालय के निर्णय को भी रद्द करते है, जिसके तहत उसने डीआरएटी द्वारा स्वतंत्रता प्रदान करने के बिन्दु पर हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया है। यह श्री जैन की एकमात्र प्रार्थना है, इसका उत्तर उनके पक्ष में यह कहकर सकारात्मक दिया गया है कि इस तरह की स्वतंत्रता का अनुदान इस तरह के विशेष कानून के तहत अपने सीमित क्षेत्राधिकार के संबंध में ट्रिब्यूनल के क्षेत्र में नहीं था और आगे, विशेष रूप से, जब बैंक समझौते में पक्षकार नहीं था।

32. मामले से अलग होने से पहले, हम दूसरे पहलू से निपटने के लिए बाध्य हैं। डीआरएटी को उचित तरीके से मामले का निर्णय करना आवश्यक है। यह डीआरटी द्वारा पारित एक आदेश की अपील पर सुनवाई कर रहा है।

वह संक्षिप्त आदेश पारित करने का जोखिम नहीं उठा सकता। नीलामी क्रेता के विद्वान वकील ने हमें यह समझाने का भरसक प्रयास किया कि आदेश गूढ होने के कारण इस न्यायालय को इसे रद्द कर देना चाहिए और मामले को डीआरएटी को भेज देना चाहिए। उक्त प्रार्थना का अपीलकर्ता-बैंक के विद्वान वरिष्ठ वकील श्री जैन और उधारकर्ता के विद्वान वकील श्री धाम ने गंभीरता से विरोध किया है। इस तरह के तरीके का सहारा न लेने के दो पहलू हमारे दिमाग में हैं, अर्थात, (प) नीलामी खरीदार ने डीआरएटी द्वारा पारित आदेश को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती नहीं दी है और न ही वह इस न्यायालय में आया है और इसके अलावा श्री जैन ने प्रतिबंधित कर दिया है उनका तर्क केवल स्वतंत्रता प्रदान करने के संबंध में था और (पप) समय के साथ बैंक को अपना पैसा वापस मिल गया और संपत्ति का स्वामित्व बदल गया। यह निश्चितता के साथ कहा जा सकता है कि डीआरएटी को नये सिरे से अपील के साथ आगे बढ़ने का निर्देश देना बिल्कुल अनावश्यक है। इसलिए, हम उक्त विकल्प को अपनाने से बचते हैं।

33. परिणामस्वरूप, ऊपर बताई गई सीमा तक अपील की अनुमति दी जाती है। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया जाएगा।

अपील की अनुमति.

मनीषा चैधरी

प्रिंसीपल मजिस्ट्रेट

किशोर न्याय बोर्ड सिरोही

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता सअनुवादक न्यायिक अधिकारी मनीषा चैधरी आर.जे.एस. द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिएइसका

उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।